'अंधेरे में' : एक विशिष्ट देन

डॉ. सुरजीत सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर,
हिंदी विभाग, गुरु काशी विश्वविद्यालय,
तलवंडी साबो, बठिंडा
singh.surjeet886@gmail.com

'अँधेरे में' कविता मुक्तिबोध की हिंदी साहित्य को दी गई एक विशिष्ट रचना है प्रायः ऐसा कोई पहलू नहीं है जिस पर मुक्तिबोध का ध्यान न गया हो उन्होंने व्यक्ति के अन्दर चल रहे उमड़ाव को बड़े ही रोचक ढंग से फैंटेसी के माध्यम से पेश किया है. यही कारण हैं कि प्रभाकर माचवे जी ने इस कविता की तुलना पिकोसो की जगाद्विख्यात चित्रकृति 'गेनिर्का' के साथ की है. 'अँधेरे में' कविता एकदम अत्याधुनिक एवं यथार्थवादी है। कवि ने परम्पराओं की जड़ो को नष्ट करने की, आत्म तत्व और विद्रोह तत्वों के संघर्ष को कविता में दिखया हैं। समन्वय की दृष्टि से समूची मानवता, साहित्य और राजनीति को वर्णित किया हैं। निश्चित रूप से 'अंधेरे में' कविता अपने आप में हिंदी साहित्य का मील का पत्थर हैं। जिसको जितना समझते हैं उसकी गहराई उतनी बढती जाती हैं।

'अँधेरे में' कविता मुक्तिबोध की सर्वाधिक चर्चित कविता है। इस कविता में उनकी खुद अनुभूति की गई अभिव्यक्ति हुई है जो मानव पीड़ा तथा संघर्ष से बंधी हुईं हैं। मुक्तिबोध ने फैंटेसी और प्रतीको के माध्यम से जीवन संघर्ष और आने वाले काल को बहुत ही सुन्दर अभिव्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया हैं। इस विषय में श्री विद्यानिवास मिश्र ने कहा है कि "मुक्तिबोध बीस वर्ष बाद के कवि हैं उनकी कविता अधूरी दीर्घ कविता है, जिसे वह फिर से जन्म लेकर व्यक्तित्वान्तरित होकर नये सिरे से समझना और जीना चाहते हैं। वह कविता कहीं भी खत्म न होने वाली, आवेग त्वरित कालयात्री है, परम स्वाधीन विश्वशास्त्री है। उनकी लम्बी कविताएँ नागात्मक भी है और वास्तव की आश्चर्यजनिक प्रतिमाएँ है। विभिन्न रंगों का, विशेषण के रूप में प्रयोग कर, मुक्तिबोध विशेष अभिव्यक्ति कर पाये हैं। 'अंधेरा' उनका प्रिय प्रतीक रहा है। सावला, काला, लाल, पीला भूरा आदि रंग के प्रयोगों से उनकी कविता विशिष्ट बनी है। 'चाँद का मुहँ टेढ़ा है' में अनेक रूपको तथा प्रतीकों के प्रयोग मिलते हैं। रूपकों तथा प्रतीकों को समझने में आसानी हो सकती है। अर्थ के स्तर पर रही दुरूहता थोड़े प्रयत्नों के पश्चात् दूर हो जाते है। परन्तु मुक्तिबोध बहुत बड़े- बड़े विवरण देते हैं जिसमे कविता लम्बी बनती गयी। अनेक प्रतीकों, रूपकों के आधार पर कभी मुक्तिबोध युद्ध तो कभी विजय सम्राट का,

बंदियों को सभा में लाये जाने आदि का वर्णन करते हैं। उनकी 'चम्बल की घाटी', 'अंधेरे में', 'लकड़ी का रावण', 'ब्रह्मराक्षस', आदि अनेक कविताएँ लम्बी बनी हैं। तिलस्मी खोह, टावर के चक्करदार जीने, चम्बल की घाटी के आतंकपूर्ण विवरणों से उनकी कविताएँ बहुत लम्बी हो गयी हैं। मुक्तिबोध ने इन कविताओं का निर्माण अविचार से नहीं किया है। ये सभी लम्बी कविताएँ पाठक के मन में अनेक बिम्ब जागृत करती हैं जिनसे जीवन की महत्वपूर्ण स्थितियों का चित्र उभर आता है।

विश्वम्भर मानव ने कहा है, "कुछ भी हो काव्य का विस्तार सकारण है, कवि की सनक नहीं। इनकी लम्बी कविताओं के विवरण, पाठक के अंत:करण में ऐसे अनेक मानस बिम्ब जगाते हैं जिससे जीवन की किसी महत्वपूर्ण स्थिति का एक ब्रहत् चित्र खड़ा हो सके। वातावरण के चित्र उस परिवेश के परिचायक हैं जिसमें रूद्ध मानवता मरणासन्न स्थिति में पहुँचकर अंतिम साँसे ले रही है। ऐसी दशा में रचनाओं की यह प्रदीर्घता अवांछनीय नहीं ठहराई जा सकती"।[1]

इस कविता के विषय में डॉ. नामवर सिंह कहते हैं- "मुक्तिबोध के प्रतिनिधि काव्य संकलन 'चाँद का मुहँ टेढ़ा है' की अंतिम कविता 'अंधरे में कदाचित उनकी अंतिम रचना भी है, जिसे कवि कर्म की चरम परिणति भी कहा जा सकता है। कुल मिलाकर उसे यदि नयी कविता का भी चरम उपलब्धि कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी"।[2]

डॉ. नरेंद्र देव वर्मा कहते हैं कि "यह कविता विवेकहीनता का अँधेरा न होकर अवचेतना का अंधकार है"।[3]

शमशेर बहादुर सिंह की यह विस्तृत टिप्पणी भी उल्लेखनीय है "अँधेरे में मुक्तिबोध की एक ऐसी कविता है जिसमें उनकी काव्यात्मक शक्ति के अनेक तत्व घुलमिल कर एक महान रचना की सृष्टी करते हैं, जो रोमानी होते हुए भी अत्यधिक यथार्थवादी और एक दम आधुनिक है। किसी भी कसौटी पर उसको जांचा जाए, तो मैं कहूंगा कि वह आधुनिक युग की कविताओं में सर्वश्रेष्ठ ठहरती है। उसके बिम्ब और प्रतीक, संकेत और सन्दर्भ, शब्द और ध्वनि- चित्र, हमारी भावनाओं में बड़ी गहराई से विविध गूंजों के रूप में भर जाते हैं। उसमे मुक्तिबोध का कवि व्यक्तित्व, बाल्ट विहटमैन और मायकवस्की के शिल्प और शक्ति से टक्कर लेता है और अपनी जमीन पर अप्रतिहत और अद्वितीय रहता है। इस कविता का भाव हमारी अमर राष्ट्रीय कविताओं में शुमार होगा, मुझे इसमें किंचित भी संदेह नहीं हैं कि हिंदी की आधुनिक स्वस्थतम् काव्य-सृष्टि का यह सर्वोपरि विजय चिन्ह है"।[4]

'अंधेरे में' कविता पर विचार किया जाए तो स्पष्ट होता है कि मुक्तिबोध ने किसी एक पहलू को नहीं छुआ हैं, बल्कि उस समय की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, स्थितियों को बड़े ही संजीव ढंग से अभिव्यक्त किया हैं। 'अंधेरे में' कविता का नायक 'तिलक' को पिता कहकर सम्बोधित करता है। पिता की पाषाण मूर्ति पुत्र के निकम्मेपन से इतना दुखी होता है कि भव्य ललाट की नासिका में से खून बहने लगता है और लोकमान्य तिलक का अंगरखा खून के धब्बों से भर जाता है। कवि पाषाण मूर्ति के ठंडे पैरों को छाती से

चिपका लेता हैं, रूआसा हो जाता है और उसे लगता है कि उसके ह्रदय में रक्त टपक रहा है, आत्मा में खून का तालाब भर रहा है। अपनी पुस्तक में मुक्तिबोध तिलक के बारे में कहते है : "लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने भारतीय जनता की उदासीन जड़ता हटाकर उसको वीर और साहसी बना दिया। तिलक एक महापंडित थे। पांडित्य के तेज में कार्य की शक्ति थी। कार्य की शक्ति में जनता में प्राण फूंक देने की ताकत थी। अंग्रेज उनकी लेखनी से कपकपा गए थे....उन पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया। वह मुकदमा देश भर में गूंज उठा....उन्होंने भारतीय जनता को युद्ध (शस्त्रों से नहीं) का आहान किया था। उनकी मृत्यु सन 1920 में हुई। बम्बई के मजदूरों ने आम हड़ताल कर दी। सुदूर रूस में बैठे हुए लेनिन ने देखा और कहा कि 'यह भविष्य का संकेत है'। ऐसे व्यक्तित्व का स्मरण करके कवि का पिता- पिता कह उठना स्वभाविक था।

'अंधेरे में' कविता के जिस रहस्यमय व्यक्ति को मुक्तिबोध खोज रहे हैं, वह उनकी सम्भावनाओं, निहित प्रभावों, प्रतिमाओं की 'पर्ण अवस्था' है, 'मेरे परिपूर्ण का आविर्भाव' यह है कि "रात का पक्षी उन्हें बताता है, 'वह तेरी पूर्णतम परम अभिव्यक्ति' है। इसलिए कविता के अंत में यह अभिव्यक्ति प्राप्त नहीं होती। यदि केवल सर्वहारा वर्ग से तदाकार होने का प्रश्न होता जो मजदूरों के जुलूस और संघर्ष में साथ रहने पर वह प्रक्रिया पूरी हो जाती। मुक्तिबोध की मनोरचना ऐसी है कि उसमे विवेक और तर्क उनके भावों और संवेदनों से टकराती है। इसलिए विवेक का रंदा चलता है, व्यक्तित्व छिला जाता है। भावों और संवेदनाओं का संसार उन्हें अत्यंत प्रिय है। ये भाव और संवेदन अधिकतर स्वत:स्फूर्ति और तर्क से परे जान पड़ते हैं। 'अंधेरे में' कविता की मूल समस्या यही है कि मध्यवर्ग का बुद्धिजीवी सर्वहारा वर्ग से तादात्म्य कैसे स्थापित करे। मुक्तिबोध इस प्रक्रिया को एक रूपक द्वारा प्रस्तुत करते है। एक बलवान लुहार ने बहुत से कड़े जलाकर उस पर लोहे का चक्का रखा। कुछ अन्य बलवान लोग लकड़ी के चक्के पर 'जबरन' घन मार- मार कर लाल-लाल लोहे की गोल पट्टी चढ़ाते हैं :

उसी प्रकार अब
आत्मा के चक्के पर चढ़ाया जा रहा
संकल्प शक्ति के लोहे का मजबूत
ज्वलंत टायर ! ! (अंधेरे में)

लुहार श्रमिक वर्ग का प्रतीक है। वह घन चोट से जबरन मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी के व्यक्तित्व का संकल्प का टायर चढ़ाता है। उसी के अनुरूप परम्परा का बोध, कवि का विवेक, उसे आत्मालोचन के लिए विवश करता है। तिलक की मूर्ति के पैरों से चिपके हुए कवि की आत्मा में जब खून का तालाब भर जाता है, तब उसके व्यक्तित्व को नये सिरे से गढ़ने की प्रक्रिया भी आरम्भ होती है:

इतने में छाती में भीतर ठक-ठक
सिरे में है धड़धड़ ! ! कट रही हड्डी ! !
फ़िक्र जबर्दस्त ! !

विवेक चलाता तीखा सा रंदा
चल रहा बसूला
छीले जा रहा मेरा यह निजत्व ही कोई ! (अंधेरे में)

अंधेरे में, कविता की अंतिम पक्तियाँ उस अस्मिता या 'आइडेंटिटी' की खोज की ओर संकेत करती हैं जो आधुनिक मानव की सबसे ज्वलंत समस्या है। नि:संदेह इस कविता का मूल कथ्य है अस्मिता की खोज, किन्तु कुछ अन्य व्यक्तिवादी कवियों की तरह इस खोज में किसी प्रकार की आध्यात्मिकता या रहस्यवाद नहीं, बल्कि गली सड़क की गतिविधि, राजनीतिक परिस्थिति और अनेक मानव- चरित्रों की आत्मा के इतिहास का वास्तविक परिवेश है। आज के व्यापक सामाजिक संबंधो के सन्दर्भ में जीने वाले व्यक्ति के माध्यम से ही मुक्तिबोध ने 'अंधेरे में' कविता की अस्मिता की खोज को नाटकीय रूप दिया है:

इसलिए मैं हर गली में
और हर सड़क पर
झाँक- झाँककर देखता हूँ हर एक चेहरा
प्रत्येक गतिविधि,
प्रत्येक चरित्र,
व हर एक आत्मा का इतिहास,
हर एक देश व राजनैतिक परिस्थिति
प्रत्येक मानवीय स्वानुभूत आदर्श
विवेक प्रक्रिया, क्रियागत परिणति ! !
खोजता हूँ पठार...पहाड़...समुंदर
जहाँ मिल सके मुझे
मेरी वह खोई हुई
परम अभिव्यक्ति अनिवार
आत्म-संभवा ! (अंधेरे में)

नाटकीय कौशल के लिए कविता मे 'मैं' को दो व्यक्तियों के चरित्रों में विभक्त कर दिया गया है; एक है काव्य नायक 'मैं' और दूसरा है उसका प्रतिरूप 'वह'। यह विभाजन वस्तुतः एक नाटकीय कौशल मात्र नहीं, बल्कि इसका आधार आत्म- निर्वासन (सेल्फ एलिएनेशन) है। अंधेरे में काव्य नायक एक आत्म- निर्वासित व्यक्ति है, जिसके आत्म निर्वासन का प्रतीक है गुहावास। दोस्तोवस्की के 'अंडरग्राउंड मैन' के समान ही यह व्यक्ति भी बाह्य परिस्थितियों से भय खाकर एक तिलिस्मी खोह में निवास करता है। कविता का आरम्भ इस तिलिस्मी खोह के रहस्मय दृश्य से होता है, जो अपने प्रभाव में काफी नाटकीय है।

जिन्दगी के

कमरे में अँधेरे
लगाता है चक्कर
कोई एक लगातार; (अंधेरे में)

अत: निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि मुक्तिबोध ने हिंदी साहित्य को एक ऐसी विशिष्ट देन दी है जिसकी आभा चहूँ ओर फैली रहेगी। प्रायः उन्होंने न केवल राजनैतिक पहलुओं को निशाना बनाया अपितु सामाजिक राजनैतिक पक्षों को भी उजागर किया हैं। अपने प्रतीकों और फैटेंसी से सर्वहारा वर्ग की दशा का भी चित्रण किया। कुल मिलाकर बात की जाये तो ऐसा कोई पंक्ष नहीं बचा जिस पर उनकी दृष्टि न गई हो।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

1. श्री. विश्वम्भर मानव, नयी कविता के नये कवि, पेज. सं.१७९-८०.
2. डॉ. नामवर सिंह : कविता के नये प्रतिमान, पेज. सं १७८.
3. डॉ . नरेंद्र देव वर्मा : मुक्तिबोध का काव्य, पेज. सं ६७.
4. शमशेर बहादुर सिंह : भूमिका, चाँद का मुहँ टेढ़ा है, पेज. सं २६.
5. मुक्तिबोध की कविता, डॉ पद्मा पाटील, दक्षिण भारत हिंदी परिषद कोल्हापुर, ५२.
6. 'अंधेरे में' कविता, मुक्तिबोध